तुलसी के राम

गोस्वामी तुलसी दास भक्तिकाल की सम्यक भक्ति धारा के राम काव्य धारा के प्रतिनिधि कवि हैं उन्होंने अपने सभी काव्यग्रंथों में राम के प्रति अनन्य भक्ति भाव व्यक्त किया है। वे राम के एकनिष्ठ एवं अनन्य भक्त के रूप में जाने जाते हैं। वे चातक को प्रेम और भक्ति का परम आदर्श मानते हुए कहते हैं–

एक भरोसो एक बल एक आस विश्वास

एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास

श्रद्धा और विश्वास ही इनकी भक्ति का मानदंड है। 'रामचरित' मानस और विनय पत्रिका दोनों ही काव्य ग्रंथों में इनकी भक्ति भावना व्यक्त हुई है। इनकी भक्ति दास्य भक्ति थी ये प्रभु राम के प्रति पूर्व समर्पित थे। रामचरित मानस में वे स्पष्ट कहते हैं 'सेवक–सेन्य' भाव बिना कोई इस संसार सागर से तर नहीं सकता।

विनय पत्रिका में तुलसी दास की भक्ति पद्धति अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त हुई है–

ब्रह्म तु है जीव हौं तू ठाकुर हौ चेरो

इसके अलावा–

तु दयालु दीन हौं भिखारी–तुलसी की भक्ति

में दैन्य की प्रधानता है। अपने इष्ट को महान व सर्वगुण संपन्न और स्वयं को तुच्छ मानकर आत्म निवेदन करते हैं –

राम सो बड़ो है कौन मोसो कौन छोटो।।

राम सो खरो है कौन मोसो कौन खोटो।

उनकी भक्ति नवधा भक्ति का पूर्ण स्वरूप दृष्टि गोचर होता है इसके अंतर्गत श्रवण कीर्तन, वाद, सेवन, अर्चना, वंदना, दास्य, नाम स्मरण, आत्म निवेदन आते हैं।

तुलसी ने भक्ति की प्राप्ति के लिए सत्संग को महत्व दिया है वे कहते हैं –

बिनु सत्संग विवेक न होई, राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।

प्रत्येक महाकवि की दृष्टि युगीन समस्याओं, घटनाओं और समस्त परिवेश से उपजती है। इसी दृष्टि से वह सर्जना करता है। मध्ययुग भी बहुत विषमता का युग था। अनेकानेक मत–मतान्तरों से अलग संप्रदायों से जनता भक्ति थी। सामाजिक, आर्थिक विसंगति का समय

था। ऐसी स्थिति में प्रतिरोध का सबसे ऊँचा स्वर कबीर का था और समन्वय की प्रबल चेष्टा तुलसी की थी। निश्चय ही दोनों का काम जागरण का था। पर जागरण का जरिया अलग था– प्रतिरोध और समन्वय। तुलसी की सामंजस्य प्रवृत्ति सारे विवाद से बचाती हुई भक्ति के राजमार्ग पर चलने के लिए सबका आह्वान करती है। वह जग मंगल का राज मार्ग है, जागरण और निर्भयता का मार्ग है राम कथा के प्रसंगों पर विचार कीजिए– राम काज ही है लोक जागरण, लोक आरधना और लोक मंगल। वेद या शास्त्र यदि लोक व्यवहार के व्याकरण है तो लोक प्रयोग–भूमि है भाषा। तुलसी इस मूल को नहीं भूले।

लोक और वेद की परंपरा को लेकर चलने वाले तुलसी का कवि 'मानस' यात्रा लोक मंगल से आरंभ करता है। इस मंगल को घर–घर की देहरी तक पहुँचाने के लिए यात्रा के पाथेय के रूप में लोकाचार लोकभाषा और शास्त्र सम्मत की पोटली बाँधता है।

आज भी हमारा प्रजातंत्र लोक में अभिराम नहीं बन पाया, पहचान नहीं बन पाया। राम–कथा यात्रा की तरह जन–भावना और जन भाषा का पाथेय साथ नहीं लिया गया। तुलसी ने राम राज्य को लोकाभिमुख बनाया। सुरसरि सम सबकी हित–साधना का तंत्र बनाया। वे आदि कवि की वंदना उनकी ही वाणी में कहते हैं, तो लोक कवि की वंदना लोक वाणी में यह लोकाभिमुखता का प्रमाण है –

'वन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ।'

जे प्राकृत कवि परम सयाने

भाषा जिन्ह हरि चरित बखाने

इसीलिए तुलसी का 'मानस' रामचरित मानस के साथ–साथ लोक चरित मानस भी है। लोक में राम और राम में लोक, मानों घुल से गये हैं। वास्तव में लोक चरित का संस्कार ही रामचरित का सरोकार हैं यह अयोध्या से जनकपुर और जनकपुर से लंका तक प्रकट हुआ है ये विविध प्रसंगों में अभिव्यंजित हुई है। तारका वध, अहिल्या उद्धार, धनुष भंजन सभी लीलाएँ मानस को संस्कारित करती है। भरी सभा में जनक की निराशा भरी उक्ति कि 'वीर विहीन मही मैं जानी' लोक को लजाने वाली उक्ति थी। राष्ट्र गौरव के प्रतिकूल कथन था – लखन लाल से सहा नहीं गया, पर राम अधीर नहीं हुए – प्रतीक्षा करते रहे और गुरू विश्वामित्र के आदेश पाकर लोकांक्षा की पूर्ति की। जन की निराशा दूर की। राजा जनक की भी। वन के सारे कथा प्रसंग, सारे संदर्भ भय मुक्ति और व्यवस्था स्थापन के कार्य हैं।

तुलसी की भक्ति भावना जीवन से पलायन नहीं सीखाती। राम पर भरोसा रख जीवन से जूझना सीखाती हैं। पराधीनता से मुक्त होने के लिए प्रोत्साहित करती है – 'पराधीन

सपनेहुं सुख नाही। कवि कभी झंडा और नारा लेकर जागरण गीत नहीं गाता। उनके गीतों का गान दूसरे करते हैं – जागने और जगाने के लिए। कबीर और तुलसी के दोहे–चौपाई सारा गाँव गाता है, पढ लिखे भी निरक्षर भी इसीलिए प्रगतिवादी चिंतक राम विलास शर्मा को भी कहना पड़ा – तुलसी हमारे जनजागरण के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं।

देखिए धर्म की कितनी सरल व्याख्या की है उन्होंने –

परहित सरिस धरम नहीं भाई।

परपीड़ा सम नहीं अधमाई।

परोपकाराय, पुण्याय पापाय पर पीड़नम जैसी पुराण सार पंक्तियाँ हो या पुरे राम चरित मानस के प्रसंग उनके बहाने नीति धर्म, भक्ति भाव की व्याख्या की गई है इन सारी व्याख्याओं को राम अपने जीवन में रमाकर उतारकर जीकर उदाहरण रखते हैं। राम मानव प्रेम की पवित्रता को सर्वोपरि मानते हैं। 'रामहि केवल प्रेम पियारा' गीता में एक श्लोक है 'यो यत श्रद्ध तदेव हि'। अर्थात् जो जैसी श्रद्धा वाला व्यक्ति होता है वह वैसा ही होता है – यानी–जाकी रही भावना जैसी प्रभु मुरत देखिए तिन तैसी तुलसी अपने राम को शरणागत वत्सल, करूणानिधान प्रेम प्रग लोकनाथ, मर्यादा पुरूषोत्तम, जाति पाति से ऊपर दीनबंधु के रूप में दर्शन करते और कराते है। इस दर्शन के पीछे उनकी मानवीय दृष्टि काम करती है। तुलसी समाज में व्याप्त दरिद्रता, दीनता, अन्याय, जातिवाद, साम्राज्य वाद, ऊँच–नीच के भेदभाव के विरूद्ध श्री राम के सहारे लोक मुक्ति चाहते हैं। मत मतान्तर, संप्रदायवाद जितना आज है उतना शायद तब नहीं था पर था तो सहीं सगुण, निर्गुण शैव–वैष्णव यदा कदा आपस में टकरा ही जाते थे– शिव और राम की श्रेष्ठता को लेकर आपसी सौहार्द्र और समन्वय का भाव देखिए –

सिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं

रामहि ते सपनेहूँ न सोहाहि।

ये कहकर दोनों के बीच के भेद को मिटा दिया। शबरी ने जब विनम्रता दीनता प्रकट करते हुए राम से निवेदन किया कि वह तो नीच जाति की है उस पर भी स्त्री है। तब राम ने कहा मेरा नाता तो भक्ति का है – हरि को भजै भजै जो हरि का होइ जात पात पुछे नहीं कोई। वास्तव में जाति धर्म का अर्थ है – भिन्न–भिन्न जाति के लिए निर्धारित धर्म नियम और स्वधर्म का तात्पर्य है मनुष्य का स्वयं अपना धर्म मानवता का धर्म या उसकी योग्यता या अवस्था के आधार पर निर्धारित उसके कर्तव्य।

तुलसी के काव्य में लोकहित की भावना की प्रधानता थी। यही उनका स्वान्तः सुख था।